डॉ. महेश प्रसाद सिन्हा
प्रधानाचार्य सह ऐसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, सी.एम.जे.कॉलेज दोनवारीहाट खुटौना, मधुबनी– 847227
Email ID : principalcmjcollege@gmail.com Web: www.cmjcollege.com Mob. No- 8544513344

हिन्दी प्रतिष्ठा के छात्रों के लिए ऑनलाइन कोर्स मैटेरियल (दिनांक– 28 मार्च, 2020)

हिन्दी साहित्य में इतिहास लेखन की परंपरा

यह विषय हिन्दी प्रतिष्ठा के पाठ्यक्रम में निर्धारित है। इसलिए हिन्दी प्रतिष्ठा के छात्रों के लिए यह अत्यंत प्रासंगिक विषय है। पिछले अध्ययन में हमने हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक इतिहास की चर्चा की थी। उसी प्रक्रिया की अगली कड़ी के रूप में इस विषय को समझा जा सकता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की एक सुदीर्घ परंपरा रही है, जिसमें फ्रेंच विद्वान गार्सा द तासी ने हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन का षुभारंभ किया। उन्होंने 'इस्तवार द ला लितेरात्युर ऐंदुई ऐंदुस्तानी' नाम से हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा। दूसरे, उर्दू के विद्वान मौलवी करीमुद्दीन हैं, जिन्होंने 'तबका तष्षुअहा में तजकिरान्ई जुअहा–ई हिन्दी' नाम से हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा। तीसरे इतिहासकार थे षिवसिंह सेंगर, जिन्होंने 'षिवसिंह सरोज' नाम से इतिहास लिखा। चौथे महत्त्वपूर्ण और दूसरे विदेषी इतिहास लेखक थे जार्ज ग्रियर्सन। जार्ज ग्रियर्सन ने 'द मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर ऑफ हिन्दुस्तान' नाम से इतिहास लिखा। पाँचवें इतिहासकार मिश्र बन्धु थे। मिश्र बन्धुओं में कई इतिहासकार थे, जिनमें ज्ञात इतिहासकारों– ष्याम बिहारी मिश्र, षुकदेव बिहारी मिश्र, गणेष बिहारी मिश्र आदि ने अपने संयुक्त प्रयास से 'मिश्रबन्धु विनोद' लिखा। उपर्युक्त सभी इतिहास और इतिहासकारों के गहन अध्ययन से पता चलता है कि उन्होंने प्रायः कविवृत्त और उसके उदाहरणों से इतिहास को महज वृत्तात्मक बनाया, इतिहास नहीं।

साहित्य की समग्र गतिविधि और उसके विकास का लेखा साहित्य का इतिहास है। साहित्यिक गतिविधि में उसकी विविध प्रवृत्तियां, नये प्रयोग, टर्निंग प्वाइंट और उनकी परंपरा आदि को सम्मिलित की जानी चाहिए। विभिन्न युगों में परिवर्तित नयी प्रवृत्तियों और नये प्रयोगों को उनकी निरंतरता में रखना विकास की प्रक्रिया को रेखांकित करना माना जाता है। इसी प्रक्रिया में आचार्य रामचन्द्र षुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' अपने आप में एक ऐसा टर्निंग प्वाइंट है, जहां से इतिहास के स्वरूप का गठन एक सुव्यवस्थित वैज्ञानिक परंपरा के रूप में होता है। इस बात पर हिन्दी के प्रायः गणमान्य विद्वानों की सहमति है। वस्तुतः इतिहास के रूप में इतिहास लेखन की षुरूआत यहीं से होती है।

इतिहास लेखन की परंपरा को हम दो रूपों में देख–समझ सकते हैं– एक, अनौपचारिक और दूसरा, औपचारिक। अनौपचारिक इतिहास लेखन की षुरूआत 19वीं

षताब्दी से पूर्व 'भक्तमाल', 'कविमाला', 'कालिदास हजारा', 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता', 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' आदि ग्रंथों से हुई। इन अनौपचारिक लेखन को ध्यान से देखने पर स्पष्ट पता चलता है कि उनमें इतिहास–बोध का अभाव है।

औपचारिक इतिहास लेखन की षुरूआत फ्रेंच विद्वान गार्सा द तासी के हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन 'इस्तवार द ला लितेरात्युर ऐंदुई ऐंदुस्तानी'1839 ई0 से हुई। इसके बाद षिवसिंह सेंगर ने 'ष्विसिंह सरोज' नामक इतिहास लिखा। इन दोनों इतिहासों में इतिहास लेखन की औपचारिक षुरूआत तो हुई, किन्तु यहां कोई निष्चित इतिहास–बोध नहीं दिखता है। इस प्रक्रिया में जार्ज ग्रियर्सन का इतिहास 'माडर्न वर्नाकुलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' और मिश्र बन्धुओं का 'मिश्रबन्धु विनोद' के इतिहास लेखन को इतिहास लेखन का आरंभिक बेहतर प्रयास माना जा सकता है। बेहतर इसलिए कि ये दोनों इतिहास बाद के हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन के लिए एक सुदृढ़ आधार बना।

इतिहास–बोध इतिहास लेखन के लिए एक आवष्यक और अनिवार्य तत्व माना गया है। इतिहास–बोध की कसौटी पर इतिहास लेखन की परंपरा में आचार्य रामचंद्र षुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' एक सक्रिय और महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। उन्होंने अपने इतिहास लेखन में विधेयवादी या प्रत्यक्षवादी इतिहास दृष्टि प्रस्तुत किया, जिसके अन्तर्गत देष, काल, वातावरण के साथ जनता की चित्तवृत्तियों को अपना आधार बनाया। उन्होंने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में स्पष्टतः लिखा कि ''जबकि प्रत्येक देष का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निष्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही 'साहित्य का इतिहास'' कहलाता है।''

आचार्य रामचंद्र षुक्ल के उक्त कथन को उनकी इतिहास दृष्टि माना जाय और उसपर विचार किया जाय तो उनके दृष्टिकोण की निम्न लिखित विषेषताएं सामने उपस्थित होती हैं–

1. युगीन परिस्थितियों का आकलन आवष्यक है।
2. वैज्ञानिक विष्लेषण और वर्गीकरण करना जरूरी है।
3. साहित्य का न केवल वर्णन किया जाय बल्कि उसका काव्यषास्त्रीय तथा समाजषास्त्रीय मूल्यांकन भी हो।

आचार्य रामचंद्र षुक्ल के इतिहास की इन विषेषताओं के साथ उनकी कुछ सीमाएं भी हैं। उनके इतिहास–बोध की सीमा यह है कि वे परंपरा और व्यक्तित्व को अपेक्षित महत्त्व नहीं दे सके और प्रतीकवाद, रहस्यवाद, मुक्तक काव्य, धार्मिक साहित्य आदि के प्रति उदार दृष्टिकोण नहीं रख पाये। वीरगाथा काल में जिन पुस्तकों का हवाला जिस

प्रामाणिकता के साथ उन्होंने दिया उनमें से प्रायः अनुमानाश्रित निकला। इसी तरह भक्तिकाल में उनके भीतर का संस्कार हावी होने लगा। इन कारणों और उनकी कमियों के विरुद्ध हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परंपरा का विकास किया।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल', 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', तथा 'हिन्दी साहित्यः उद्‌भव और विकास' आदि रचनाओं के द्वारा आचार्य रामचंद्र षुक्ल की सीमाओं पर प्रकाष डालते हुए एक नये इतिहास–बोध को प्रस्तुत किया। द्विवेदी जी परंपरावादी दृष्टिकोण के समर्थक थे। साथ ही लोकवादी दृष्टिकोण के भी समर्थक थे। यही कारण है कि उन्होंने तुलसीदास की अपेक्षा कबीरदास को महत्त्व दिया। परंपरावादी दृष्टिकोण के अन्तर्गत किसी भी रचना या रचनाकार का मूल्यांकन इस दिृष्टि से होता है कि वह अपनी परंपरा से किस प्रकार प्रभावित हुआ। 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में उन्होंने इस प्रक्रिया को ''भारतीय चिंता का स्वाभाविक विकास'' कहा है। इस स्वाभाविका विकास की प्रक्रिया में कबीर के रहस्यवाद को नाथों के हठयोग का अगला चरण कहा और सूर के श्रृंगार को जयदेव और विद्यापति की परंपरा का अगला चरण कहा है। इस प्रकार द्विवेदी जी ने साहित्य का मूल्यांकन मानवतावादी प्रतिमानों पर किया। वैज्ञानिक विष्लेषण और वर्गीकरण पर संष्लेषण और समग्रता को वरीयता प्रदान की। द्विवेदी जी की भी कुछ अपनी सीमाएं थी। उन्होंने युगीन परिस्थितियों तथा रचनाकार के व्यक्तित्व को पर्याप्त महत्त्व नहीं दिया।

इतिहास लेखन की परंपरा में अगली कड़ी के रूप में रामस्वरूप चतुर्वेदी मुख्य हैं। उनकी पुस्तक 'हिन्दी साहित्य संवेदना और विकास' है, जिसमें उन्होंने अपनी समग्रतावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इनके इतिहासबोध में भाषा और साहित्य के गहरे संबंधों की पड़ताल, साहित्य और अन्य कलाओं के सूक्ष्म संबंधों का विष्लेषण मिलता है। विभिन्न विधाओं के सूक्ष्म अंतरों की व्याख्या भी इनके इतिहास लेखन की विषेषता है। भारतीय संस्कृति और यूरोपीय संस्कृति की टकराहट से पुनर्जागरण या नवजागरण की व्याख्या चतुर्वेदी जी के इतिहासबोध की परिपक्वता दर्षाती है।

इतिहास लेखन की प्रक्रिया में रामविलास षर्मा का इतिहासबोध मार्क्सवादी होने के कारण महत्त्वपूर्ण है। मार्क्सवादी इतिहास लेखन में माना जाता है कि साहित्य किसी समाज की उत्पादन प्रणाली का ऊपरी ढ़ांचा है, जिसकी व्याख्या उत्पादन प्रणाली के ढ़ांचे से की जा सकती है। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने प्रेमचंद, भारतेन्दु और निराला के साथ महाबीर प्रसाद द्विवेदी और रामचंद्र षुक्ल की रचनाओं का मूल्यांकन किया। उनके अलावे अनेक इतिहास लेखकों ने इतिहास लेखन की परंपरा का विकास किया, जिनमें मुख्य हैं गणपति चन्द्र गुप्त का 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास'। गुप्त जी के दृष्टिकोण में घटना की व्याख्या, तार्किक वर्गीकरण एवं विष्लेषण तथा वैज्ञानिकता का

निर्वाह किया गया है। कहीं–कहीं अतिवैज्ञानिकता के निर्वाह के कारण वे साहित्य से न्याय नहीं कर पाये हैं।

हिन्दी साहित्य में दलित और स्त्री दृष्टिकोण के आगमन के साथ इतिहास लेखन में भी परिवर्तन आया। इस दृष्टिकोण से सुमन राजे का 'हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास' महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने स्पष्ट किया कि अबतक का इतिहास लेखन पुरुषवादी दृष्टिकोण से लिखा जाने के कारण अधूरा है। उन्होंने आदिकाल के अन्तर्गत 'थेरीगाथाओं' को स्थान देकर इतिहासबोध में स्त्री दृष्टिकोण का समावेष किया। सुमन राजे ने रीतिकाल को अपने इतिहासबोध का हिस्सा नहीं बनाया। दलित दृष्टिकोण के अन्तर्गत डॉ. धर्मवीर, ओमप्रकाष वाल्मीकि, मोहनदास नैमिषराय और जयप्रकाष कर्दम आदि लेखकों ने इस प्रसंग को उठाया है। इनलोगों का मानना है कि दलित ही दलितों की समस्या को समझ सकता है और उसकी वेदना को मुकम्मल अभिव्यक्त कर सकता है। 'स्वयं वेदना' और 'संवेदना' के अंतराल को पाटा नहीं जा सकता है। इसी दृष्टिकोण से इनलोगों ने आचार्य रामचंद्र षुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि पर ब्राह्मणवादी इतिहास लेखक कहकर तथा प्रेमचंद की कहानी 'कफन' और उपन्यास 'रंगभूमि' पर प्रष्नचिह्न खड़ा किया।

इस प्रकार संपूर्ण विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परंपरा में जार्ज ग्रियर्सन, मिश्रबन्धुओं, रामचंद्र षुक्ल और हजारी प्रसाद द्विवेदी का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उनके बाद भी इतिहास दर्षन मे अनेक दिषाओं में परिवर्तन और विकास हुए। लगातार समाज और स्थितियों के परिवर्तन के साथ इतिहासबोध का बदलना स्सवाभाविक है। इतिहास लेखन और इतिहास दर्षन निरन्तर चलने और विकसित होने वाली प्रक्रिया है। उसे किसी एक खूंटे में या किसी एक सिद्धांतों के दायरे में रखना मुमकिन नहीं है, क्योंकि उसमें आगे भी अपार संभावनाएं मौजूद हैं।

दिनांक – 28/03/2020 – महेष प्रसाद सिन्हा